श्री अरविन्द का शैक्षिक चिन्तन

[Educational Thought of Shri Aurobindo]

श्री अरविन्द का शैक्षिक चिन्तन

(Educational Thought of Shri Aurobindo)

श्री अरविन्द का जन्म 15 अगस्त, 1872 को कलकत्ता के एक सम्पन्न परिवार में हुआ था। इनके पिता श्री कृष्णधन घोष कलकत्ता के प्रसिद्ध डॉक्टर थे और पाश्चात्य संस्कृति के प्रशंसक थे। इनके घर में नौकर तक अंग्रेजी भाषा बोलते थे। परन्तु डॉक्टर साहब बड़े दयालु प्रवृत्ति के थे। ऐसे परिवार में श्री अरविन्द का लालन-पालन हुआ।

श्री अरविन्द एक दार्शनिक के रूप में अधिक विख्यात हैं, परन्तु अपने दार्शनिक सिद्धान्तों को मनुष्य जीवन में उतारने के लिए इन्हें एक विशेष प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता अनुभव हुई। उधर राष्ट्रोत्थान के लिए भी तत्कालीन शिक्षा उपयुक्त नहीं थी। इसलिए इन्होंने शिक्षा की एक राष्ट्रीय योजना प्रस्तुत की। इनके शिक्षा सम्बन्धी ये विचार मुख्य रूप से इनकी दो पुस्तकों—'नेशनल सिस्टम ऑफ एजूकेशन' (National System of Education) और 'ऑफ एजूकेशन'(Of Education) में प्रकट हुए हैं। यहाँ उनका सार संक्षेप प्रस्तुत है।

शिक्षा का सम्प्रत्यय

श्री अरविन्द का विश्वास था कि मनुष्य द्रव्य और प्राण की अवस्था को पार कर मानस की स्थिति में होता है; जन्म के बाद उसे अतिमानस की अवस्था, उससे आनन्द, आनन्द से चित्त और चित्त से सत् की अवस्था पर पहुँचना होता है। अब यदि हम उसे इस विकास की ओर अग्रसर करना चाहें तो हमें उसे ऐसी शिक्षा देनी होगी कि वह अपने द्रव्य, प्राण एवं मानस स्वरूप को जाने और उससे आगे के स्वरूप एवं उनकी ओर बढ़ने की विधियों को जाने। श्री अरविन्द के अनुसार यह सब कार्य शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है। एक ऐसी शिक्षा द्वारा जो मनुष्य का भौतिक, प्राणिक मानसिक, अन्तरात्मिक और आध्यात्मिक विकास करे। ऐसी शिक्षा को ये सम्पूर्ण शिक्षा (Integral Education) कहते थे। इनके शब्दों में—'शिक्षा मानव के मस्तिष्क और आत्मा की शक्तियों का निर्माण करती है और उसमें ज्ञान, चरित्र और संस्कृति को जागृत करती है' (Education is the building of the power of the human mind and spirit. It is the evoking of knowledge, character and culture)।

शिक्षा के उद्देश्य

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के दो मुख्य कार्य हैं—पहला कार्य है मनुष्य को उसके अपने विकास क्रम (आध्यात्मिक) का स्पष्ट ज्ञान कराना और दूसरा कार्य है उसमें सत् तक पहुँचने की शक्ति का विकास करना। श्री अरविन्द ने शिक्षा के उद्देश्यों को इसी विकास क्रम में प्रस्तुत किया है।

Scanned with CamScanner

1. भौतिक विकास का उद्देश्य — इस जगत एवं मानव विकास का प्रथम सोपान द्रव्य (जड़) है। श्री अरविन्द शिक्षा द्वारा मनुष्य को सर्वप्रथम पंच महाभूतों से बने इस वस्तु जगत एवं उसके स्वयं के भौतिक स्वरूप के बारे में ज्ञान करा देना चाहते थे और उसे अपने शरीर की रक्षा एवं विकास की क्रियाओं में प्रशिक्षित करा देना चाहते थे। इसे ही दूसरे शब्दों में शारीरिक विकास का उद्देश्य कहते हैं। श्री अरविन्द के अनुसार सत्-चित्त-आनन्द की प्राप्ति भी स्वस्थ शरीर से ही होती है इसलिए शिक्षा का सर्वप्रथम उद्देश्य शारीरिक विकास होना चाहिए। मनुष्य को अपने द्रव्य स्वरूप की रक्षा के लिए रोटी, कपड़ा और मकान की आवश्यकता होती है। अतः शिक्षा द्वारा उसे किसी व्यवसाय अथवा उद्योग का प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए। इसे ही दूसरे शब्दों में व्यावसायिक विकास कहते हैं। श्री अरविन्द यह भी जानते थे कि मनुष्य अपने इस भौतिक जीवन को समाज में रहकर जीता है इसलिए ये उसके सामाजिक विकास पर भी बल देते थे और इन सबको मनुष्य के भौतिक विकास के अन्तर्गत रखते थे।

2. प्राणिक विकास का उद्देश्य — मानव विकास का दूसरा सोपान है प्राण। प्राण का अर्थ उस शक्ति से है जिसके कारण जगत में परिवर्तन होता है। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का दूसरा उद्देश्य इस प्राण शक्ति का विकास होना चाहिए। इनके अनुसार मनुष्य की प्राण शक्ति को सही दिशा में लगाने के लिए यह आवश्यक है कि उसका नैतिक एवं चारित्रिक विकास किया जाए और उसकी इच्छा शक्ति को दृढ़ किया जाए। यह विकास तभी सम्भव है जब इन्द्रियों को असत् से सत् मार्ग की ओर लगा दिया जाए। अतः इन्द्रियों का प्रशिक्षण शिक्षा का दूसरा उद्देश्य होना चाहिए। इसके लिए ये स्नायु शुद्धि, मानस शुद्धि और चित्त शुद्धि आवश्यक समझते थे।

3. मानसिक विकास का उद्देश्य — मानस अर्थात् मन मनुष्य के विकास क्रम का तीसरा सोपान है। मन हमारी सत्ता का सबसे चंचल भाग है। अतः शिक्षा द्वारा मनुष्य का मानसिक विकास करना चाहिए। श्री अरविन्द की शिष्या एवं उत्तराधिकारी श्री माताजी के अनुसार मन की शिक्षा के पाँच अंग होते हैं—एकाग्रता की शक्ति को जागृत करना, मन की व्यापकता एवं समृद्धता बढ़ाना, उच्चतम लक्ष्य की ओर समस्त विचारों को संगठित करना, विचारों को संयमित करना तथा अनिष्ट विचारों का त्याग करना और मानसिक स्थिरता का विकास करना। इस सबके लिए श्री अरविन्द योग की क्रिया द्वारा ही मनुष्य की कल्पना, स्मृति, चिन्तन, तर्क और निर्णय की शक्तियों को बढ़ाने पर बल देते थे।

4. अन्तरात्मिक विकास का उद्देश्य — अतिमानस अर्थात् मनुष्य का अन्तःकरण मानव विकास का चौथा सोपान है। श्री अरविन्द ने इस अन्तःकरण के चार स्तर बताए हैं—चित्, बुद्धि, मन और अन्तर्ज्ञान। श्री अरविन्द ने अनुभव किया था कि इस स्तर पर पहुँच कर मनुष्य बिना ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग किए सब कुछ देख-समझ लेता है। सत् का साक्षात्कार तो होता ही इस अन्तःकरण से है। अतः शिक्षा द्वारा इस अन्तःकरण का विकास किया जाना चाहिए। इस विकास के लिए भी श्री अरविन्द ने योग विधि को आवश्यक माना है।

5. आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य — मानव विकास के अन्तिम तीन सोपान हैं—आनन्द, चित् और सत्। श्री अरविन्द के अनुसार आनन्द वह स्थिति है जिसमें मनुष्य सुख-दुःख की अनुभूति ही नहीं करता है; चित् वह चेतना शक्ति है जिससे मनुष्य अपने, जगत के और सत् के स्वरूप को जानता है और सत् शुद्ध अस्तित्व का नाम है। सत् केवल ईश्वर को प्राप्त है इसलिए सत् ही ईश्वर है और ईश्वर ही सत् है। ये तीनों आध्यात्मिक स्तर हैं। इन स्तरों पर पहुँचने के लिए श्री अरविन्द ने कर्म योग एवं ध्यान योग को साधन बताया है और इन दोनों मार्गों पर चलने के लिए मनुष्य के लिए योग क्रिया (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि) की आवश्यकता बताई है। इनके अनुसार यह शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य होना चाहिए।

शिक्षा की पाठ्यचर्या

श्री अरविन्द ने शिक्षा के पाँच उद्देश्य—भौतिक, प्राणिक, मानसिक, अन्तरात्मिक और आध्यात्मिक विकास बताए हैं। इनकी दृष्टि से इन सब उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समन्वित रूप से प्रयास करना होता है और इसके लिए इन्होंने एक विस्तृत एवं समन्वित पाठ्यचर्या प्रस्तुत की है। भौतिक विकास के लिए ये पाश्चात्य विज्ञान एवं तकनीकी को आवश्यक समझते थे इसलिए इन्होंने उसे भी पाठ्यचर्या में स्थान दिया है, परन्तु इनका स्पष्टीकरण था कि उससे भी अधिक महत्त्व की वस्तु है हमारी अपनी संस्कृति जो योग की संस्कृति है, उसके

Scanned with CamScanner

अभाव में हम पाश्चात्य भौतिक विज्ञान का दुरुपयोग भी कर सकते हैं। इनके द्वारा प्रस्तुत पाठ्यचर्या को हम निम्नलिखित रूप में क्रमबद्ध कर सकते हैं—

भौतिक विषय — मातृभाषा एवं राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व की भाषाएँ, इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, गणित, विज्ञान, मनोविज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, कृषि, उद्योग, वाणिज्य और कला।

भौतिक क्रियाएँ — खेल-कूद, व्यायाम, उत्पादन कार्य, शिल्प।

आध्यात्मिक विषय — वेद, उपनिषद, गीता, धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, विभिन्न देशों के धर्म एवं दर्शन।

आध्यात्मिक क्रियाएँ — भजन, कीर्तन, ध्यान एवं योग।

परन्तु इन सब विषयों का अध्ययन एवं क्रियाओं का प्रशिक्षण एक दिन में नहीं किया जाएगा। श्री अरविन्द आश्रम में उसे निम्नलिखित रूप में रक्खा गया है—

प्राथमिक स्तर — मातृभाषा, अंग्रेजी, फ्रेंच, सामान्य विज्ञान, गणित, सामाजिक अध्ययन एवं चित्रकला और खेल-कूद, व्यायाम, बागवानी, भजन व कीर्तन।

माध्यमिक स्तर — मातृभाषा, अंग्रेजी, फ्रेंच, गणित, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जन्तु विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, सामाजिक अध्ययन एवं चित्रकला और खेल-कूद, व्यायाम, बागवानी, कृषि, अन्य शिल्प, भजन, कीर्तन, ध्यान व योग।

उच्च स्तर — अंग्रेजी साहित्य, फ्रेंच साहित्य, गणित, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, विज्ञान का इतिहास, सभ्यता का इतिहास, जीवन का विज्ञान, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, भारतीय व पाश्चात्य दर्शन, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध एवं विश्व एकीकरण, कृषि, अन्य शिल्प एवं भजन, कीर्तन, ध्यान व योग।

शिक्षण विधियाँ

श्री अरविन्द विकास सिद्धान्त में विश्वास करते थे। इनके अनुसार विकास के सात सोपान होते हैं–द्रव्य ⟶ प्राण ⟶ मानस ⟶ अतिमानस ⟶ आनन्द ⟶ चित्त ⟶ सत्। मनुष्य इनमें से तीसरे सोपान पर होता है, उसे अति मानस ⟶ आनन्द ⟶ चित्त और सत् सोपानों पर चढ़ना शेष रहता है। इसके लिए ये स्वस्थ शरीर, निर्मल मन और संयमी जीवन को आवश्यक मानते थे। इस दिशा में बढ़ने के लिए उसे किस ज्ञान एवं कौशल की आवश्यकता होती है उसके लिए भी ये तीन तत्त्व आवश्यक होते हैं और सामान्य ज्ञान एवं कौशल प्राप्त करने के लिए भी। पर शिक्षण विधियों के सम्बन्ध में श्री अरविन्द के विचार पूर्णरूप से स्पष्ट नहीं हैं। कहीं तो वे प्राचीन शिक्षा पद्धति के अनुसार क्रमिक विधि अर्थात् एक दो विषयों के अध्ययन के बाद अन्य एक दो विषयों का अध्ययन प्रारम्भ करने की बात करते हैं और कहीं बच्चों के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए अनेक विषयों एवं क्रियाओं की शिक्षा एक साथ करने की बात करते हैं। इसी प्रकार एक ओर तो ये बच्चे की शिक्षा का विधान उसकी भौतिक शक्तियों के आधार पर करने की बात करते हैं और दूसरी ओर उसके लिए योग की क्रिया के महत्त्व को स्वीकार करते हैं। परन्तु एक बात अवश्य है और वह यह कि ये प्राचीन विधियों को नया रूप देना चाहते थे। ये उपदेश, प्रवचन, व्याख्यान और अन्य मौखिक विधियों के प्रयोग की स्वीकृति तो देते थे लेकिन इस शर्त के साथ कि किसी भी स्थिति में बच्चों को रटाया नहीं जाएगा अपितु उन्हें स्वयं के प्रयत्नों से आत्मसात् कराया जाएगा। यह तभी सम्भव है जब शिक्षण रुचिकर हो। इसके लिए ये प्राथमिक स्तर पर कहानी विधि का प्रयोग करने की बात कहते थे। ये पाठ्य-पुस्तक प्रणाली के भी समर्थक थे पर इस सम्बन्ध में इनका यह कहना था कि पहले बच्चों को ज्ञान की खोज के लिए तैयार किया जाना चाहिए और फिर उन्हें पुस्तकें पढ़ने के लिए कहना चाहिए। पुस्तकों से बच्चे रटेंगे नहीं अपितु उनका प्रयोग सहायक एवं सन्दर्भ ग्रंथ के रूप में करेंगे। स्वाध्याय विधि को अपनाते समय भी ये इस बात पर ध्यान देने के लिए कहते थे। इनकी दृष्टि से योग की क्रिया सीखने की उत्तम विधि है पर इसमें भी वे स्वक्रिया, चिन्तन और तर्क को आधार मानते थे। इनके शिक्षण सम्बन्धी विचारों का विश्लेषण करने पर हम निम्नलिखित तथ्यों से अवगत होते हैं—

Scanned with CamScanner

(1) शिक्षण करते समय बच्चों की शारीरिक और मानसिक क्षमता तथा उनकी अपनी रुचियों का ध्यान अवश्य रखना चाहिए।
(2) रटने के स्थान पर समझने पर बल देना चाहिए।
(3) बच्चों को क्रिया करने के अधिक से अधिक अवसर देने चाहिए और उन्हें स्वयं के अनुभव से सीखने देना चाहिए।
(4) बच्चों को चित्त वृत्तियों के निरोध, चिन्तन और मनन की क्रिया में प्रशिक्षित करते चलना चाहिए।
(5) बच्चों के साथ प्रेम और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। उन्हें अपने कार्य करने की स्वतन्त्रता भी होनी चाहिए।
(6) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिए।
(7) हर स्तर पर बच्चों के सहयोग से आगे बढ़ना चाहिए।

अनुशासन

श्री अरविन्द की दृष्टि से स्वेच्छा से कर्त्तव्य पालन करना ही अनुशासन है। इनके अनुसार शिक्षा के क्षेत्र में भी अनुशासन का बड़ा महत्त्व होता है। यह अनुशासन कैसे प्राप्त किया जाए, इस सम्बन्ध में श्री अरविन्द के अपने विचार हैं। अनुशासन का सम्बन्ध ये भावना से जोड़ते थे और इस भावना का सम्बन्ध नैतिकता से। इनके अनुसार प्रत्येक शिक्षक का यह उत्तरदायित्व है कि वह बच्चों के मन में ऐसी भावना भरे कि वे अच्छाई की ओर अग्रसर हों, नैतिकता का पालन करें और अपने अध्ययन में एकाग्रता से लगें। इनके विचारानुसार शिक्षक को बच्चों के साथ प्रेम और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए, कठोरता से वास्तविक अनुशासन की प्राप्ति नहीं की जा सकती। दण्ड को ये अमानवीय कृत्य कहते थे।

इस सन्दर्भ में एक बात और उल्लेखनीय है और वह यह कि श्री अरविन्द प्रभावात्मक अनुशासन में विश्वास करते थे। इनके अनुसार शिक्षकों की बच्चों के सामने आदर्श आचरण प्रस्तुत करना चाहिए, जिसका अनुकरण कर बच्चे पहले तो आदर्श आचरण की ओर अग्रसर हों और फिर वैसा करना अपना कर्त्तव्य समझें। इनकी दृष्टि से वास्तविक अनुशासन आन्तरिक होता है।

शिक्षक

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक का स्थान बच्चे के पथ-प्रदर्शक और सहायक के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। इनके अनुसार शिक्षक न तो बच्चों को ज्ञान देता है और न ही उनके अन्दर के ज्ञान को विकसित करता है, अपितु बच्चों की इस बात में सहायता करता है कि वे स्वयं ज्ञान को प्राप्त करें और अपने अन्दर के ज्ञान को विकसित करें। यह कार्य वही शिक्षक कर सकता है जिसे शिक्षार्थी और पाठ्यचर्या, दोनों का पूरा-पूरा ज्ञान हो। शिक्षार्थी का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे मनोविज्ञान का अध्ययन करना चाहिए और पाठ्यचर्या का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे यथा विषयों का अध्ययन और क्रियाओं में प्रशिक्षण लेना चाहिए। श्री अरविन्द के अनुसार एक अध्यापक को व्यक्ति की आत्मा को आगे बढ़ाने वाला होना चाहिए। यह कार्य वही व्यक्ति कर सकता है जिसे अध्यात्म विषय का स्पष्ट ज्ञान हो और जो योग की क्रिया में प्रशिक्षित हो। श्री अरविन्द शिक्षक को इसी रूप में देखना चाहते थे। ये स्वयं बहुत बड़े योगी थे इसलिए शिक्षक को भी एक योगी बना देना चाहते थे।

शिक्षार्थी

शिक्षार्थी को श्री अरविन्द शिक्षा का केन्द्र मानते थे। इनके अनुसार प्रत्येक बालक कुछ सामान्य शक्तियाँ और कुछ विशिष्ट योग्यताएँ अथवा प्रतिभाएँ लेकर जन्म लेता है। बच्चों की इन शक्तियों और योग्यताओं में बड़ी भिन्नता होती है। श्री अरविन्द के अनुसार बच्चों की शिक्षा का विधान उनकी इन शक्तियों के आधार पर ही करना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि शिक्षा की व्यवस्था करते समय बच्चों की व्यष्टिगत रुचि, रुझान और योग्यताओं का ध्यान रखना चाहिए। श्री अरविन्द के अनुसार सबसे बड़ी चीज जिसे एक बालक लेकर

Scanned with CamScanner

पैदा होता है, वह उसकी आत्मा है। श्री अरविन्द के अनुसार यह आत्मा अपने में पूर्ण होती है, इसके कारण ही समस्त ज्ञान अन्तर्निहित होता है। इस पूर्ण ज्ञान की अनुभूति तभी हो सकती है जब व्यक्ति ब्रह्मचर्य का पालन करे और एकाग्रचित होकर ध्यान करे। श्री अरविन्द शिक्षार्थी से यही अपेक्षा करते थे। इनके अनुसार प्रत्येक शिक्षार्थी को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए और सत्य ज्ञान की खोज के लिए साधना करनी चाहिए। इसके साथ-साथ श्री अरविन्द बालक के पर्यावरण के प्रभाव को भी स्वीकार करते थे। ये जानते थे कि बालक के विकास में उसके पर्यावरण का बड़ा हाथ रहता है। ये बच्चों को उच्च पर्यावरण में रखना चाहते थे जिसमें उनकी ज्ञानेन्द्रियों का विकास और प्रशिक्षण हो और वे सत्य की खोज के लिए अग्रसर हों।

विद्यालय

श्री अरविन्द के अनुसार प्रत्येक विद्यालय को बच्चों के भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार के विकास में सहायक होना चाहिए। ये मनुष्य के भौतिक विकास के लिए विद्यालयों में संसार की सभी श्रेष्ठ भाषाओं, साहित्य, सभ्यता और संस्कृति, गणित और विज्ञान आदि की शिक्षा का प्रबन्ध करने और आध्यात्मिक विकास के लिए बच्चों को श्रम करने, कर्त्तव्य पालन करने, मानव सेवा करने और ध्यान करने के अवसर देने पर बल देते थे। इनके अनुसार विद्यालय भौतिक प्रगति और योग साधना के केन्द्र होने चाहिए।

श्री अरविन्द मनुष्य-मनुष्य में भेद नहीं करते थे, ये जाति, धर्म, अर्थ और रंग किसी भी आधार पर मनुष्य-मनुष्य के अन्तर को स्वीकार नहीं करते थे। इनके अनुसार विद्यालयों में सभी बच्चों को अपनी योग्यतानुसार प्रवेश के समान अवसर दिए जाने चाहिए और उन्हें अपनी भाषा, धर्म और संस्कृति के अध्ययन के लिए सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए। विद्यालयों का पर्यावरण विश्वबन्धुत्व की भावना से पूर्ण होना चाहिए। इनके द्वारा स्थापित श्री अरविन्द आश्रम का 'श्री अरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र' इसी प्रकार का शिक्षा केन्द्र है।

श्री अरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र एक आवासीय सहशिक्षा संस्था है। इसमें शिशु शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा एवं अनुसन्धान तक की व्यवस्था है परन्तु कुछ अपने प्रकार की। यथा—

1. **शिशु विहार** (किन्डर गार्टन, शिशु स्तर) आयु 3 से 5 वर्ष, पाठ्यक्रम 3 वर्षीय।
2. **भविष्य** (आवनी, प्राथमिक स्तर) आयु 6 से 8 वर्ष, पाठ्यक्रम 3 वर्षीय।
3. **प्रगति** (प्रोगे, उच्च प्राथमिक स्तर) आयु 9 से 11 वर्ष, पाठ्यक्रम 3 वर्षीय।
4. **पूर्णता की ओर** (अंनाबा बैर ला पैर फैक्सिओ, माध्यमिक स्तर) आयु 12 से 17 वर्ष, पाठ्यक्रम 6 वर्षीय।
5. **उच्चर्या** (हायर कोर्स, उच्च शिक्षा स्तर) आयु 18 से 20 वर्ष, पाठ्यक्रम 3 वर्षीय।

विशेष

(1) यहाँ शिक्षा का सर्वप्रथम उद्देश्य है—दिव्य शरीर की प्राप्ति। इसके लिए शिक्षा के सभी स्तरों पर शारीरिक शिक्षा, व्यायाम एवं विभिन्न प्रकार के खेल-कूदों में भाग लेना अनिवार्य है, परन्तु छात्र-छात्राएँ अपनी क्षमता एवं पसन्द के खेलकूद चुनने के लिए स्वतन्त्र हैं।

(2) यहाँ शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य है—अनन्त शक्ति की प्राप्ति। इसके लिए शिक्षा के सभी स्तरों पर ध्यान योग अनिवार्य है।

(3) यहाँ प्रथम तीन स्तरों पर शिक्षा का माध्यम फ्रेंच भाषा है और अन्तिम दो स्तरों पर फ्रेंच एवं अंग्रेजी दो भाषाएँ हैं।

(4) यहाँ शिक्षा की मुक्त प्रणाली है। यहाँ किसी भी स्तर के छात्रों को किसी प्रकार के बन्धन में नहीं रखा जाता, उन्हें अध्ययन विषयों एवं खेल-कूद आदि क्रियाओं के चयन और उनको अपनी गति से सीखने एवं करने की पूरी छूट है। उच्च शिक्षा स्तर पर तो छात्र-छात्राएँ यहाँ उपलब्ध अध्ययन सुविधाओं में से किसी एक अथवा जितने चाहें उतने विषयों का अध्ययन कर सकते हैं और अपनी गति से कर सकते हैं। इस केन्द्र में छात्र-छात्राओं पर बाहर से कुछ नहीं लादा जाता, बस

Scanned with CamScanner

उन्हें ऐसा पर्यावरण दिया जाता है कि वे अपनी आन्तरिक सत्ता से पथ-प्रदर्शन पाते हैं। इसे ही शिक्षा की मुक्त प्रणाली कहा जाता है।

(5) यहाँ किसी भी स्तर पर किसी भी प्रकार की परीक्षाएँ नहीं होतीं, शिक्षकों की संस्तुति पर ही छात्र-छात्राओं को आगे के अध्ययन में प्रवेश दे दिया जाता है। यहाँ कोई पाठ्यक्रम पूरा करने के बाद किसी प्रकार का प्रमाणपत्र भी नहीं दिया जाता।

शिक्षा के अन्य पक्ष

नैतिक और धार्मिक शिक्षा — श्री अरविन्द साधु थे, सन्त थे और एक बहुत बड़े योगी थे। नैतिकता और धर्म में इनकी आस्था थी, इसलिए ये शिक्षा को नैतिकता और धर्म पर आधारित करना चाहते थे। श्री अरविन्द के विचार से धर्म कोई भी हो और कैसा भी हो परन्तु वह मनुष्य को अपने लिए, दूसरों के लिए और ईश्वर के लिए जीना सिखाता है। किसी धर्म से घृणा करना, यह धर्म का लक्षण नहीं; यह तो धार्मिक संकीर्णता का परिचायक है। साम्प्रदायिकता का विकास इसी संकीर्णता के कारण होता है। श्री अरविन्द संसार के सब धर्मों को समान दृष्टि से देखते थे और किसी देश की शिक्षा को उसके अपने धर्म पर आधारित करना चाहते थे। इनका स्पष्ट मत था कि धर्म के अभाव में मनुष्य अपने आध्यात्मिक स्वरूप को नहीं पहचान सकता।

राष्ट्रीय शिक्षा — श्री अरविन्द अपने देश की परतन्त्रता से दुःखी थे और उस समय की शिक्षा पद्धति से इन्हें बड़ा असन्तोष था। इन्होंने इस बात पर बल दिया कि देश स्वतन्त्र होना चाहिए और इसकी शिक्षा को भारतीय रूप प्रदान करना चाहिए। इन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा की पूरी रूपरेखा तैयार की। इनके अनुसार राष्ट्रीय शिक्षा वह शिक्षा है जो राष्ट्र के नियन्त्रण में राष्ट्रीय लोगों को राष्ट्रीय पद्धति से दी जाती है। यही कारण है कि ये शिक्षा को भारतीय भाषाओं के माध्यम से देने पर बल देते थे और उसे ब्रह्मचर्य एवं आध्यात्मिक जीवन पर आधारित करना चाहते थे। इनका कहना था कि मातृभाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने से ही उसे जन साधारण के लिए सुलभ किया जा सकता है। ब्रह्मचर्य व्यवस्था और आध्यात्मिक जीवन तो हमारी संस्कृति की आत्मा है, उसे शिक्षा का आधार बनाने से भारतीयों में राष्ट्र की आत्मा का समावेश होगा। यहाँ हमें यह बात समझ लेनी चाहिए कि श्री अरविन्द संकुचित राष्ट्रीयता में विश्वास नहीं करते थे। ये मानवतावादी व्यक्ति थे, इसलिए इनका दृष्टिकोण बड़ा व्यापक था। ये अन्तर्राष्ट्रीयता के हामी थे। श्री अरविन्द आश्रम में देश-विदेश की भाषाओं और संस्कृतियों को स्थान देना इनकी इस भावना का प्रतीक है।

श्री अरविन्द के शैक्षिक चिन्तन का मूल्यांकन
(Evaluation of Educational Thought of Sri Aurobindo)

श्री अरविन्द के अनुसार सम्पूर्ण शिक्षा वह है जो मनुष्य को अपने द्रव्य (भौतिक), प्राण (प्राणिक) एवं मानस (मानसिक) स्वरूप का ज्ञान कराए और उससे आगे के स्वरूप अतिमानस अन्तरात्मिक और आनन्द-चित्त-सत्त (आध्यात्मिक) को समझने और प्राप्त करने में सहायक हो। उनके अपने शब्दों में—'शिक्षा मानव के मस्तिष्क और आत्मा की शक्तियों का निर्माण करती है और उसमें ज्ञान, संस्कृति और चरित्र को जागृत करती है (Education is the building of the power of the human mind and spirit. It is the evoking of knowledge, character and culture)।

इस परिभाषा में दो दोष साफ नज़र आते हैं—एक तो यह कि इसमें शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप को स्पष्ट नहीं किया गया है और दूसरा यह कि इसमें उसके कार्यों को भी अपने कुछ विशिष्ट रूप में प्रस्तुत किया गया है जो सामान्य मनुष्य की पहुँच के बाहर हैं।

श्री अरविन्द ने मनुष्य के विकास के सात सोपान बताए हैं—द्रव्य → प्राण → मानस → अति मानस → आनन्द → चित्त → सत्। श्री अरविन्द ने शिक्षा के उद्देश्य इसी क्रम में निश्चित किए हैं—भौतिक विकास का उद्देश्य, प्राणिक विकास का उद्देश्य, मानसिक विकास का उद्देश्य, अन्तरात्मिक विकास का उद्देश्य और आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य।

Scanned with CamScanner

यूँ श्री अरविन्द द्वारा निश्चित भौतिक विकास के उद्देश्य में शारीरिक, सामाजिक एवं व्यावसायिक विकास के उद्देश्य निहित हैं, प्राणिक विकास के उद्देश्य में नैतिक एवं चारित्रिक विकास का उद्देश्य निहित है, मानसिक विकास के उद्देश्य में मानसिक शक्तियों के विकास पर बल है, अन्तरात्मिक विकास के उद्देश्य में मन, बुद्धि, चित्त और अन्तर्ज्ञान के विकास पर बल है और आध्यात्मिक विकास के उद्देश्य में योग क्रिया में प्रशिक्षण पर बल है और इस प्रकार इन उद्देश्यों में शिक्षा के सभी मूल उद्देश्य निहित हैं परन्तु सीधी-सच्ची बात को इतने उलझे हुए रूप में रखकर इन्होंने एक उलझन ही पैदा की है। आज की भाषा में हमें सीधे रूप में कहना चाहिए कि शिक्षा एक बहुउद्देशीय प्रक्रिया है, इसके द्वारा मनुष्यों का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक एवं चारित्रिक, व्यावसायिक और आध्यात्मिक विकास किया जाता है।

श्री अरविन्द ने शिक्षा के जिन उद्देश्यों का प्रतिपादन किया है, उनकी प्राप्ति के लिए एक विस्तृत पाठ्यचर्या भी प्रस्तुत की है। इन्होंने भौतिक विषयों में—मातृभाषा एवं राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व की भाषाएँ, इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, गणित, विज्ञान, मनोविज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, कृषि, उद्योग, वाणिज्य एवं कला को, भौतिक क्रियाओं में खेल-कूद, व्यायाम, उत्पादन कार्य एवं शिल्प को, आध्यात्मिक विषयों में वेद, उपनिषद्, गीता, धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, विभिन्न देशों के धर्म एवं दर्शन को और आध्यात्मिक क्रियाओं में—भजन, कीर्तन, ध्यान एवं योग को स्थान दिया है। और साथ ही शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिए भिन्न-भिन्न पाठ्यचर्या प्रस्तावित की है।

यदि श्री अरविन्द द्वारा प्रस्तावित पाठ्यचर्या को ध्यानपूर्वक देखा-समझा जाए तो स्पष्ट होता है कि इन्होंने शिक्षा की पाठ्यचर्या को बहुत विस्तृत रूप प्रदान किया है, उसमें प्राचीन एवं अर्वाचीन और भारतीय एवं पाश्चात्य सभी उपयोगी ज्ञान एवं क्रियाओं को स्थान दिया है। परन्तु प्रारम्भ से ही बच्चों को मातृभाषा के साथ अंग्रेजी और फ्रेंच भाषा को पढ़ाने का कोई औचित्य नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व का तो बहुत कुछ है परन्तु सामान्य व्यक्ति को उस सबको जानने की क्या आवश्यकता! फिर हर स्तर पर योग की क्रिया को स्थान देना भी वर्तमान परिस्थितियों में सम्भव नहीं है। कुछ तो आवश्यक है।

शिक्षण विधियों के सम्बन्ध में श्री अरविन्द के विचार पूर्णरूप से स्पष्ट नहीं हैं, कहीं ये प्राचीन विधियों का समर्थन करते नजर आते हैं, और कहीं अर्वाचीन विधियों के प्रयोग पर बल देते हैं। पर ये रटने के कट्टर विरोधी थे, इन्होंने रटने के स्थान पर समझने पर बल दिया है। योग की विधि को इन्होंने सीखने की उत्तम विधि माना है।

श्री अरविन्द की इस बात से कौन असहमत होगा कि बच्चों को रटने के स्थान पर समझने की ओर अग्रसर करना चाहिए! उनका यह विचार भी अपने में सही है कि योग की विधि समझने की उत्तम विधि है पर वर्तमान में इस योग को मन की एकाग्रता के रूप में ही लिया जा सकता है, कर्म योग या ध्यान योग के रूप में नहीं।

श्री अरविन्द के अनुसार स्वेच्छा से कर्त्तव्य पालन करना ही सच्चा अनुशासन है। इस अनुशासन की प्राप्ति के लिए श्री अरविन्द ने दो बातों पर बल दिया है—एक यह कि शिक्षकों को बच्चों के सामने आदर्श आचरण प्रस्तुत करना चाहिए और दूसरा यह कि यदि वे फिर भी अन्यथा आचरण करें तो उन्हें प्रेम से समझाना चाहिए। इनका स्पष्ट मत था कि कठोरता से वास्तविक अनुशासन की प्राप्ति नहीं की जा सकती। दण्ड को ये अमानवीय कृत्य मानते थे।

इसमें दो मत नहीं कि वास्तविक अनुशासन की प्राप्ति के लिए विद्यालय की उच्च परिपाटी और शिक्षकों का आदर्श आचरण आवश्यक होता है लेकिन यदि फिर भी बच्चे अनुशासनहीनता करें तो केवल प्रेम से काम नहीं चलता, कभी-कभी कुछ दण्ड भी देना आवश्यक होता है, पर यह दण्ड सीमित एवं प्रेम पर आधारित होना चाहिए।

श्री अरविन्द शिक्षक को न तो बच्चों को ज्ञान देने वाला मानते थे और न उनमें ज्ञान का विकास करने वाला मानते थे, ये तो शिक्षक को बच्चों के स्वतन्त्र विकास में पथ-प्रदर्शक के रूप में स्वीकार करते थे। ये शिक्षकों से यह आशा करते थे कि वे बच्चों को भौतिक ज्ञान की प्राप्ति में सहायता करने के साथ-साथ उनकी

Scanned with CamScanner

आत्मा का भी विकास करें। श्री अरविन्द के अनुसार यह कार्य कर्मयोगी एवं ध्यानयोगी शिक्षक ही कर सकते हैं।

बच्चों के स्वतन्त्र विकास की बात सुनने-समझने में बड़ी अच्छी लगती है पर वास्तव में इस रूप में औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था नहीं की जा सकती। शिक्षकों से योगी होने की अपेक्षा भी इस युग में सम्भव नहीं। वे अपने कर्त्तव्य का निष्ठा से पालन करें और बच्चों को जीवन के लिए तैयार करें, यही बहुत है।

श्री अरविन्द बालक के व्यष्टित्व का आदर करते थे। इनका स्पष्टीकरण था कि भौतिक दृष्टि से बच्चों में असमानता होती है और आध्यात्मिक (आत्मा की) दृष्टि से उनमें समानता होती है। अतः शिक्षकों को बच्चों का भौतिक विकास उनकी अपनी क्षमताओं के आधार पर करना चाहिए और उनका आध्यात्मिक विकास उनकी आत्मा की पूर्णता के आधार पर करना चाहिए। इन दोनों प्रकार के लिए ये बच्चों से ब्रह्मचर्य के पालन और सत्य ज्ञान की खोज के लिए साधना की अपेक्षा करते थे।

जहाँ तक शिक्षार्थियों को ब्रह्मचर्य पालन के उपदेश की बात है, यह अपने में एकदम उपयुक्त है पर बच्चों को प्रारम्भ से ही वास्तविक सत्य की खोज के लिए योग साधना की बात आज के युग में व्यावहारिक नहीं है।

श्री अरविन्द मनुष्य-मनुष्य में जाति, धर्म, अर्थ आदि किसी भी आधार पर भेद नहीं करते थे। इन्होंने विद्यालयों में सभी बच्चों को अपनी योग्यतानुसार प्रवेश का अधिकार देने पर बल दिया। इनकी दृष्टि से विद्यालयों में बच्चों के भौतिक एवं आध्यात्मिक, दोनों प्रकार के विकास के लिए सुविधाएँ होनी चाहिए पर उन पर किसी प्रकार का बन्धन नहीं होना चाहिए। उन्हें विषयों के चयन की स्वतन्त्रता होनी चाहिए, खेल-कूद एवं व्यायाम क्रियाओं के चयन की छूट होनी चाहिए और अपना कार्य अपनी गति से पूरा करने की छूट होनी चाहिए। इसे ये शिक्षा की मुक्त प्रणाली कहते थे।

श्री अरविन्द की यह बात भले ही सभी को स्वीकार न हो कि विद्यालय योग साधना के केन्द्र होने चाहिए परन्तु अपना मत तो यह है कि जब तक मनुष्य के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास में सन्तुलन नहीं किया जाता तब तक वह वास्तविक सुख एवं शान्ति की प्राप्ति नहीं कर सकता। विद्यालयों में प्रारम्भ से ही बच्चों के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए प्रयत्न किया जाना चाहिए।

श्री अरविन्द शिक्षा को धर्म पर आधारित करना चाहते थे। श्री अरविन्द का तर्क था कि संसार के सभी धर्म मनुष्य को अपने लिए, दूसरों के लिए और ईश्वर के लिए जीना सिखाते हैं। अतः किसी भी देश की शिक्षा उसके धर्म पर आधारित होनी चाहिए। परन्तु वर्तमान लोकतन्त्रीय धर्मनिरपेक्ष भारत में शिक्षा को किसी धर्म विशेष या यहाँ प्रचलित समस्त धर्मों पर आधारित करना सम्भव नहीं है। वर्तमान की माँग तो सर्वधर्म समभाव अर्थात् धार्मिक सहिष्णुता के विकास की है। यदि हम बच्चों में सर्वधर्म सम्मत नैतिक नियमों का विकास ही कर सकें तो यह हमारी बहुत बड़ी सफलता होगी।

श्री अरविन्द के अनुसार राष्ट्रीय शिक्षा वह शिक्षा है जो राष्ट्र के नियन्त्रण में राष्ट्र के समस्त लोगों को राष्ट्रीय पद्धति से दी जाती है। इन्होंने इस आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा की पूरी योजना भी तैयार की थी। परन्तु इन्होंने अपने पांडिचेरी आश्रम में जिस शिक्षा की व्यवस्था की थी वह योग साधना की दृष्टि तो भारतीय थी परन्तु अपनी पाठ्यचर्या की दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय थी, उसमें देश-विदेश की अनेक भाषाओं एवं ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के अध्ययन की आज भी व्यवस्था है। यदि हम पांडिचेरी के श्री अरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र की शिक्षा को ध्यानपूर्वक देखें-समझें तो स्पष्ट होता है कि वह संकुचित राष्ट्रीयता के दायरे से बाहर की शिक्षा है, वह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की शिक्षा है, परन्तु उसकी आत्मा योग शिक्षा ही है।

श्री अरविन्द का प्रभाव

एक दार्शनिक के रूप में श्री अरविन्द ने भारतीय दर्शन की वैज्ञानिक बाना पहनाने का प्रयत्न किया है और कुछ लोग उनके विचारों से बड़े प्रभावित भी हुए हैं। ये स्थान जाति, धर्म, अर्थ और रंग आदि किसी भी आधार पर मनुष्य-मनुष्य में भेद नहीं करते थे, ये विश्वबन्धुत्व में विश्वास करते थे। इनके द्वारा स्थापित पांडेचेरी आश्रम में देश-विदेश के, विभिन्न जातियों के, विभिन्न धर्मों को मानने वाले और विभिन्न आर्थिक स्तर से आए

Scanned with CamScanner

लोग रहते हैं, सभी शारीरिक श्रम करते हैं, सभी अपनी-अपनी योग्यतानुसार भौतिक जीवन को चलाने के लिए भिन्न-भिन्न कार्य करते हैं, उत्पादन करते हैं और सभी इस सबके साथ-साथ ध्यान योग करते हैं, भौतिक जीवन की रक्षा करते हुए अध्यात्मिकता की ओर बढ़ते हैं। इससे भौतिकता प्रधान एवं धर्मप्रधान समाज एवं संस्कृतियों की दूरी कम हो रही है और समाज से वर्गभेद समाप्त हो रहा है।

श्री अरविन्द का यह दर्शन केवल भारतीय सीमा तक सीमित नहीं है। पांडेचेरी आश्रम की शाखाएं देश-विदेश में स्थापित हैं जो पूरे संसार में भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन के बीच समन्वय स्थापित करने की ओर प्रयत्नशील हैं। योग अब भूमण्डलीय विषय हो गया है।

हाँ, शिक्षा के क्षेत्र में श्री अरविन्द का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। प्रारम्भ में इन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन में भाग लिया जिसका प्रभाव कुछ ही वर्षों तक रहा। उसके बाद ये योग साधना की ओर प्रवृत्त हो गए और कुछ वर्ष बाद इन्होंने अपने आश्रम में एक शिक्षा संस्था स्थापित की। यह संस्था 'श्री अरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र' के रूप में विकसित है परन्तु इसमें शिक्षा की जो मुक्त प्रणाली है उसे सर्वसाधारण की शिक्षा में लागू नहीं किया जा सकता है।

उपसंहार

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि एक दार्शनिक रूप में श्री अरविन्द ने भारत की दार्शनिक पृष्ठभूमि पर जिस सर्वांग योग दर्शन का विकास किया है वह तो कुछ लोगों का बड़ा भाया है परन्तु मानव विकास के क्रम को अवरोहरण और आरोहण के रूप में प्रस्तुत करके उन्होंने एक उलझन भर पैदा की है। और शिक्षाशास्त्री के रूप में इन्होंने शिक्षा की जिस मुक्त प्रणाली का श्रीगणेश किया था, वह भी अपने में स्वीकार करने योग्य नहीं है। यूँ पांडिचेरी (पुदुचेरी) स्थित श्री अरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र में आज भी शिक्षा की मुक्त प्रणाली चल रही है—वहाँ किसी भी स्तर के छात्रों को किसी भी प्रकार के बन्धन में नहीं रक्खा जाता, उन्हें अध्ययन विषयों एवं खेल-कूद आदि क्रियाओं के चयन की पूरी छूट है और साथ ही अपना अध्ययन कार्य अपनी गति से पूरा करने की छूट है पर इसे सर्वव्यापक तो नहीं बनाया जा सकता। औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था तो उसी दशा में की जा सकती है जब उसके उद्देश्य, पाठ्यचर्या, शिक्षण विधियाँ, पढ़ने-पढ़ाने का समय आदि सभी कुछ निश्चित हों। इस सबके अभाव में किसी भी समाज में शिक्षा को व्यवस्थित रूप से नहीं चलाया जा सकता। साफ जाहिर है कि शिक्षा की मुक्त प्रणाली को जन शिक्षा का आधार नहीं बनाया जा सकता।

परीक्षण प्रश्न

निबन्धात्मक प्रश्न

1. शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यचर्या और शिक्षण विधियों के सन्दर्भ में श्री अरविन्द के विचारों की विवेचना कीजिए।
2. 'श्री अरविन्द दार्शनिक के साथ-साथ शिक्षाशास्त्री भी थे।' इस कथन की विवेचना कीजिए।
3. श्री अरविन्द के शैक्षिक विचार आधुनिक भारत में कहाँ तक उपयोगी हैं?

लघुउत्तरीय प्रश्न

4. श्री अरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र के मुख्य अभिलक्षणों का उल्लेख कीजिए।
5. श्री अरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र की मुक्त शिक्षा प्रणाली का परिचय दीजिए।
6. शिक्षा में अनुशासन के सम्बन्ध में श्री अरविन्द के क्या विचार थे?
7. श्री अरविन्द शिक्षक को किस रूप में देखना चाहते थे?
8. श्री अरविन्द शिक्षार्थियों को किस रूप में देखना चाहते थे?

Scanned with CamScanner